International Journal for Innovative Engineering and Management Research
PEER REVIEWED OPEN ACCESS INTERNATIONAL JOURNAL
www.ijiemr.org

हिंदी भक्ति काव्यधारा में कविताओं के महत्व का अध्ययन

RAM KUMAR
RESEARCH SCHOLAR, THE GLOCAL UNIVERSITY, SAHARANPUR (U.P)

DR. SHOBHA TRIPATHI
ASSOCIATE PROFESSOR, THE GLOCAL UNIVERSITY, SAHARANPUR (U.P)

सारांश

हिंदी कविता की विकास यात्रा प्रारंभ हुई 1000 ईसवी से। आप जानते हैं भाषा तो बहता नीर है। कविता का इतिहास बहुत पुराना है - जैसे-जैसे समाज बदला, सामाजिक परिस्थितियाँ बदलीं, वैसे-वैसे कविता की भाषा और स्वरूप भी बदलता गया। आइए, पढ़ते हैं कि कविता कहाँ से चली और कहाँ तक पहुँची। इसकी यात्रा में कौन-कौन से पड़ाव आए। हिंदी साहित्य का आरंभ सन् 1000 ई0 से माना जाता है। भाषा, समाज, संस्कृति और साहित्य के बदलाव की कोई निश्चित तारीख नहीं होती। ये परिवर्तन धीरे.धीरे होते हैं। इस कारण कुछ विद्वान इस सीमा रेखा को सन् 1000 से आगे या पीछे तक भी ले जाते हैं। हिंदी साहित्य के इन 1000 वर्षों में भाषा के रूप तथा साहित्यिक प्रवृत्तियों में अनेक परिवर्तन हुए हैं। उन परिवर्तनों पर विचार करने के लिए हम प्रायः समूचे साहित्य को चार मोटे.मोटे भागों में विभाजित करते हैं। ये भाग मुख्यतः समय के अनुसार हैं अतः इन्हें 'काल' कहते हैं। ये चार काल आदिकाल, भक्तिकाल, रीतिकाल तथा आधुनिककाल के नाम से जाने जाते हैं। प्रथम काल में हिंदी की कुछ बोलियों में रचित काव्यों के साथ.साथ आज की हिंदी (जिसे हम खड़ी बोली हिंदी कहते हैं) के भी कुछ लक्षण दिखाई पड़ते हैं। भक्तिकाल के साहित्य में मुख्यतः ब्रजभाषा और अवधी की प्रधानताएं है। रीतिकाल में ब्रजभाषा अपने पूर्ण उत्कर्ष पर पहँुची। आधुनिक काल में खड़ी बोली मानक हिंदी भाषा का आधार बनी तो उसी पर आधारित उर्दू कभी उससे नज़दीक तो कभी दूर होती रही। साहित्यिक प्रवृत्तियाँ, भाषा.रूपों और कवि तथा रचनाओं की दृष्टि से इस संपूर्ण हिंदी काव्य की प्रमुख बातों को हम पाठ में जानने का प्रयास करेंगे।

मुख्यशब्दः हिंदी भक्ति, कविताओं के विकास, कविता का इतिहास, कविता की भाषा और स्वरूप, हिंदी साहित्य, साहित्यिक प्रवृत्तियां

प्रस्तावना

धार्मिक अनुभूति और सामाजिक आलोचना द्वारा कबीर आदि संतों ने जनता को विचार के स्तर पर प्रभावित किया था। सूफी संतों ने अपने प्रेमाख्यानों द्वारा लोकमानस को भावना के स्तर पर प्रभावित करने का प्रयत्न किया। ज्ञानमार्गी संत कवियों की वाणी मुक्तकबद्ध है, प्रेममार्गी कवियों की प्रेमभावना लोकप्रचलित आख्यानों का आधार लेकर प्रबंधकाव्य के रूप में ख्यापित हुई है। सूफी ईश्वर को अनंत प्रेम और सौंदर्य का भंडार मानते हैं। उनके अनुसार ईश्वर को जीव प्रेम के मार्ग से ही उपलब्ध कर सकता है। साधना के मार्ग में आनेवाली बाधाओं को वह गुरु या पीर की सहायता से साहसपूर्वक पार करके अपने परमप्रिय का साक्षात्कार करता है। सूफियों ने चाहे अपने मत के प्रचार के लिए अपने कथाकाव्य की

International Journal for Innovative Engineering and Management Research
PEER REVIEWED OPEN ACCESS INTERNATIONAL JOURNAL
www.ijiemr.org

रचना की हो पर साहित्यिक दृष्टि से उनका मूल्य इसलिए है कि उसमें प्रेम और उससे प्रेरित अन्य संवेगों की व्यंजना सहजबोध्य लौकिक भूमि पर हुई है। उनके द्वारा व्यंजित प्रेम ईश्वरोन्मुख है पर सामान्यत: यह प्रेम लौकिक भूमि पर ही संक्रमण करता है। परमप्रिय के सौंदर्य, प्रेमक्रीड़ा और प्रेमी के विरहोद्वेग आदि का वर्णन उन्होंने इतनी तन्मयता से किया है और उनके काव्य का मानवीय आधार इतना पुष्ट है कि आध्यात्मिक प्रतीकों और रूपकों के बावजूद उनकी रचनाएँ प्रेमसमर्पित कथाकाव्य की श्रेष्ठ कृतियाँ बन गई हैं। उनके काव्य का पूरा वातावरण लोकजीवन का और गार्हस्थिक है। प्रेमाख्यानकों की शैली फारसी के मसनवी काव्य जैसी है।

इस धारा के सर्वप्रमुख कवि जायसी हैं जिनका "पदमावत' अपनी मार्मिक प्रेमव्यंजना, कथारस और सहज कलाविन्यास के कारण विशेष प्रशंसित हुआ है। इनकी अन्य रचनाओं में "अखरावट' और "आखिरी कलाम' आदि हैं, जिनमें सूफी संप्रदायसंगत बातें हैं१ इस धारा के अन्य कवि हैं कुतबन, मंझन, उसमान, शेख, नबी और नूरमुहम्मद आदि।

ज्ञानमार्गी शाखा के कवियों में विचार की प्रधानता है तो सूफियों की रचनाओं में प्रेम का एकांतिक रूप व्यक्त हुआ है। सगुण धारा के कवियों ने विचारात्मक शुष्कता और प्रेम की एकांगिता दूरकर जीवन के सहज उल्लासमय और व्यापक रूप की प्रतिष्ठा की। कृष्णभक्तिशाखा के कवियों ने आनंदस्वरूप लीलापुरुषोत्तम कृष्ण के मधुर रूप की प्रतिष्ठा कर जीवन के प्रति गहन राग को स्फूर्त किया। इन कवियों में सूरसागर के रचयिता महाकवि सूरदास श्रेष्ठतम हैं जिन्होंने कृष्ण के मधुर व्यक्तित्व का अनेक मार्मिक रूपों में साक्षात्कार किया। ये प्रेम और सौंदर्य के निसर्गसिद्ध गायक हैं। कृष्ण के बालरूप की जैसी विमोहक, सजीव और बहुविध कल्पना इन्होंने की है वह अपना सानी नहीं रखती। कृष्ण और गोपियों के स्वच्छंद प्रेमप्रसंगों द्वारा सूर ने मानवीय राग का बड़ा ही निश्छल और सहज रूप उद्घाटित किया है। यह प्रेम अपने सहज परिवेश में सहयोगी भाववृत्तियों से संपृक्त होकर विशेष अर्थवान् हो गया है। कृष्ण के प्रति उनका संबंध मुख्यत: सख्यभाव का है। आराध्य के प्रति उनका सहज समर्पण भावना की गहरी से गहरी भूमिकाओं को स्पर्श करनेवाला है। सूरदास वल्लभाचार्य के शिष्य थे। वल्लभ के पुत्र बिट्ठलनाथ ने कृष्णलीलागान के लिए अष्टछाप के नाम से आठ कवियों का निर्वाचन किया था। सूरदास इस मंडल के सर्वोत्कृष्ट कवि हैं। अन्य विशिष्ट कवि नंददास और परमानंददास हैं। नंददास की कलाचेतना अपेक्षाकृत विशेष मुखर है।

हिंदी साहित्य के इतिहास का काल-विभाजन

हिंदी साहित्य का इतिहास लिखने वाले विद्वानों ने अपने.अपने ढंग से काल.विभाजन किया है, आचार्य रामचंद्र शुक्ल का काल.विभाजन लोगों ने अधिक उपयुक्त माना है। शुक्ल जी ने विक्रम संवत् का उल्लेख किया है, जिसे हम निम्नलिखित वृक्ष-आरेख रूप में रख सकते हैं।

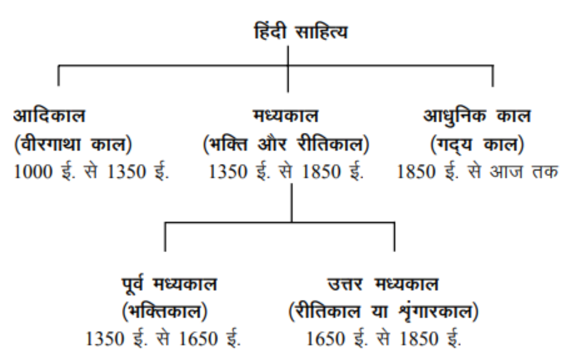

International Journal for Innovative Engineering and Management Research
PEER REVIEWED OPEN ACCESS INTERNATIONAL JOURNAL
www.ijiemr.org

आदिकाल

आदिकाल में विविध प्रकार की काव्य रचनाएँ हुईं। जिनकी विशेषता के आधार पर इसे अलग-अलग नामों से जाना जाता है। इस काल को वीरगाथा काल, प्रारंभिक काल, संधिकाल, सिद्ध-सामंत आदि अनेक नाम दिए गए। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने इसे आदिकाल नाम से ही स्वीकार किया। आदिकाल की काव्य.प्रवृत्तियों पर विचार करने से पहले हम यह देखें कि आदिकाल में किस.किस प्रकार का साहित्य रचा गया।

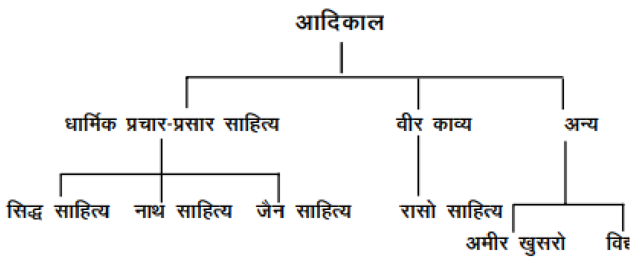

हिंदी साहित्य के आदिकाल का प्रारंभ वीर गाथाओं से शुरू होता है। भूमिका के रूप में अपभ्रंश-साहित्य को जानना इसलिए ज़रूरी है कि आधुनिक हिंदी-भाषाओं का उदय इसी अपभ्रंश काल से हुआ। अपभ्रंश में रचना सातवीं सदी के आस-पास मिलने लगती है। लेकिन दसवीं सदी तक आते-आते इसमें प्रचुर मात्रा में साहित्य लिखा जा चुका था। अपभ्रंश साहित्य पर विचार करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि ये रचनाएँ शुद्ध साहित्यिक कोटि की नहीं थीं। ये रचनाएँ विभिन्न धार्मिक संप्रदायों/मतों की हैं और धर्मों, मतों के प्रचार के लिए लिखी गई थीं। बौद्ध धर्म का जब पतन हुआ तो वह हीनयान और वज्रयान दो शाखाओं में बँट गया। इनमें पूरब में वज्रयानी बिहार से लेकर आसाम तक फैले हुए थे। 'चौरासी सिद्ध' इन्हीं में से हुए। प्रसिद्ध गुरु गोरखनाथ भी इन्हीं चौरासी सिद्धों में से एक थे। इन्होंने अलग से नाथ पंथ चलाया। गोरखनाथ का समय राहुल सांकृत्यायन जी के अनुसार विक्रम की 10वीं सदी ठहरता है। यानी पृथ्वीराज चौहान के कुछ समय बाद में। एक बात ध्यान देने की है। यही नाथ पंथ और सिद्ध संप्रदाय आगे चलकर भक्ति संप्रदाय का आधार बना। कम-से-कम ज्ञानाश्रयी शाखा का 75 प्रतिशत तो इन्हीं से लिया गया था। साखी, बानी, पद आदि विधाएँ इसी काल में पनपीं। साधुओं की सधुक्कड़ी और संधा भाषाओं का उदय भी इन्हीं नाथों और सिद्धों से मानना चाहिए। ज्ञानाश्रयी शाखा का रहस्यवाद तो पूरा का पूरा इन्हीं का था। इसके अतिरिक्त जाति-पाँति का विरोध, मूर्तिपूजा का विरोध भी यहीं से आया।

नाथ और सिद्धों की भाषा देश-भाषा मिश्रित अपभ्रंश है अर्थात् पुरानी हिंदी की काव्य-भाषा। उस समय रचनाएँ मुख्य रूप से दोहों, चौपाइयों तथा पदों में की जाती थीं। लेकिन इन नाथों और सिद्धों की रचनाओं को शुद्ध साहित्य की कोटि में न मानकर धार्मिक अधिक माना गया।

सिद्ध-साहित्य

आप अभी पढ़ चुके हैं कि बौद्ध.धर्म की एक शाखा वज्रयान कहलाई। इस शाखा के विद्वान् सिद्ध कहलाए। सिद्धों की संख्या चौरासी बताई गई है। इन सिद्धों ने बौद्ध.धर्म के वज्रयान तत्त्व का प्रचार करने के लिए जो साहित्य जनभाषा में लिखा वह सिद्ध. साहित्य कहलाया।

सिद्धों के नामों के आगे आदरार्थ 'पा' जोड़ा जाता है, जैसे सरहपा, शबरपा, लुइपा, डोम्भिमा, कण्हपा, आदि। सरहपा कृत 'दोहाकोश' तथा

शबरपा कृत 'चर्यापद' सिद्ध. साहित्य के प्रमुख ग्रंथ हैं। सिद्ध साहित्य का प्रभाव भक्तिकाल तक, विशेषतः संत साहित्य पर दिखाई देता है।

नाथ-साहित्य

सिद्धों की वाममार्गी भोगप्रधान योग.साधना की प्रतिक्रिया के रूप में आदिकाल में मत्स्येन्द्रनाथ (मछन्दरनाथ) तथा गोरखनाथ (जिनके नाम पर गोरखपुर शहर बसा है) ने नाथपंथ चलाया। गोरखपुर में बहुत बड़ा गोरखनाथ का मंदिर है नाथपंथ सिद्धों का ही सुधरा हुआ रूप है। नाथों की संख्या नौ बताई गई है। इन नाथों द्वारा रचित प्रचारात्मक साहित्य नाथ.साहित्य कहलाया।

नाथ.साहित्य के आरंभकर्ता हैं-गोरखनाथ। इनकी चौदह रचनाएँ बताई जाती हैं। डॉबड़थ्वाल ने 'गोरखबानी' नाम से इनकी रचनाओं का एक संकलन संपादित किया है। इनके साहित्य में लोक नीति और साधना की व्यापकता है। गुरु गोरखनाथ ने सहयोग का उपदेश दिया था। 'ह' का अर्थ है सूर्य और 'ठ' का अर्थ है चंद्र। इन दोनों के योग को ही 'हठयोग' कहते हैं। गोरखनाथ ने ही षट्चक्रों वाला योगमार्ग हिंदी.साहित्य में चलाया था। गोरखनाथ ने लिखा है कि धीर वही है जिसका चित्त विकृत न हो:

नौ लख पातरि आगे नाचैं, पीछे सहज अखाड़ा।

ऐसे मन लै जोगी खेलै, तब अंतरि बसै भंडारा।।

स्पष्ट है कि खड़ीबोली की झलक गोरखनाथ की रचनाओं में मिलती है, इसीलिए इन्हें हिंदी का आदि कवि कहा जाता है। इसी परंपरा का विकास भक्तिकाल के कवि कबीर में मिलता है। अन्य प्रसिद्ध नाथपंथी कवि हैं - चौरंगीनाथ, गोपीचंद, भरथरी (भर्तृहरि) आदि। इन सभी कवियों ने प्रायः गोरखनाथ का ही अनुसरण किया है।

जैन-साहित्य

जिस प्रकार हिंदी के पूर्वी क्षेत्रा में सिद्धों ने बौद्ध-धर्म का प्रचार हिंदी.कविता के माध्यम से किया, उसी प्रकार पश्चिमी क्षेत्रा में जैन साधुओं ने अपने मत का प्रचार किया। जैन.साहित्य का सर्वाधिक लोकप्रिय रूप 'रास' ग्रंथ हैं। इनमें उपदेशात्मकता है। मुख्यतः जैन.तीर्थंकरों के जीवनचरित्रा तथा वैष्णव.अवतारों की कथाएँ हैं। शालिभद्र सूरि रचित 'भरतेश्वर.बाहुबली रास' को जैन.साहित्य की रास.परंपरा का पहला ग्रंथ माना जाता है। इस ग्रंथ में भरतेश्वर तथा बाहुबली का चरित्रा.वर्णित है। इसी प्रकार से जैन आचार्य ने 'श्रावकाचार' की रचना की। आसगु की रचना है 'चन्दनबालारास'। जिनधर्म सूरि की कृति है 'स्थूलिभद्ररास'। विजयसेन सूरि ने 'रेवंतगिरिरास' की रचना की तथा सुमति मणि ने नेमिनाथ का चरित्रा 'नेमिनाथरास' में प्रस्तुत किया। स्वयंभू सर्वाधिक प्रसिद्ध हुए।

रासो-साहित्य या वीर-काव्य या वीरगाथाकाल (सं. 1050-1373द्ध वीर गाथाओं की रचना देश-भाषा अर्थात् जन भाषा में हुई है। यह भाषा उस समय के जनसाधारण की भाषा थी। ऐसा नहीं है कि उस काल में नीति धर्म या उपदेशपरक रचनाएँ नहीं हो रही थीं। लेकिन मुख्य बल वीर गाथाओं पर था। यह समय सल्तनत काल के आसपास का है।

International Journal for Innovative Engineering and Management Research

PEER REVIEWED OPEN ACCESS INTERNATIONAL JOURNAL

www.ijiemr.org

मुसलमान भारत के पश्चिमी छोर पर बसने लगे थे और तुर्कों के आक्रमण लगातार जारी थे। स्वयं राजपूत राजा भी आपस में युद्ध किया करते थे। ऐसी दशा में दरबारी कवि अपने आश्रयदाताओं के गुणों और शौर्य का अतिशयोक्ति पूर्ण वर्णन किया करते थे। इन्हीं दरबारी कवियों को 'चारण' भी कहा गया है। इसलिए वीर-काव्य को चारण-काव्य भी कहा जाता है।

ये वीरगाथाएँ दो रूपों में मिलती हैं-प्रबंध काव्य के रूप में और वीर गीतों के रूप में। प्रबंध काव्य के रूप में जो सबसे प्राचीन ग्रंथ उपलब्ध है, वह है 'पृथ्वीराज रासो।' वीर गीत के रूप मंे सबसे पुरानी रचना 'बीसलदेव रासो' है। इसमें समयानुसार भाषा-परिवर्तन के भी संकेत मिलते हैं। इसी तरह से आल्हा है, जिसमें समय-समय पर भाषा-परिवर्तन होता रहा।

खुमान रासो: शिव सिंह सरोज के अनुसार एक अज्ञातनामी भाट ने 'खुमान रासो' नामक काव्य गं्रथ लिखा था, जिसमें श्री रामचंद्र से लेकर खुमान तक के युद्धों का वर्णन है। संवत् 810 से लेकर सं. 1000 के बीच चित्तौड़ में रावल खुमान नामक तीन राजा हुए। कर्नल टॉड ने इन तीनों को एक मान कर इनके युद्धों का वर्णन किया है। खुमान के समय बगदाद के खलीफा अलमान् ने चित्तौड़ पर आक्रमण किया। उसकी रक्षा हो गई, खुमान ने 24 युद्ध किए और सं. 869 से 893 तक राज्य किया। यह सारा वर्णन 'दलपति विजय' नामक किसी रासो पर आधारित है।

बीसलदेव रासो: नरपति नाल्ह नामक कवि बीसल देव का समकालीन था और संभवतः उसका दरबारी कवि था। इसने 'बीसलदेव रासो' नाम का एक छोटा-सा ग्रन्थ लिखा है। शार्ङगधर कृत 'हम्मीर रासो', जगनिक रचित 'परमाल रासो' (उत्तर प्रदेश में 'आल्हखंड' के नाम से जो काव्य प्रचलित है। धीरे-धीरे 'आल्हा' लोकगीत की एक शैली बन गया और आधुनिक विषयों पर भी 'आल्हा' लिखे जाने लगे। इसी काव्य की ये पंक्तियाँ हैं, जो लोकजिह्वा पर चढ़ गई हैं-

'बारह बरिस सौ कूकर जीवै, अरु तेरह लौ जिये सयार।

बरस अठारह क्षत्रिय जीवै, आगे जीवन को धिक्कार।।'

पृथ्वीराज रासो: 'पृथ्वीराज रासो' हिंदी का प्रथम महाकाव्य है और इसके रचयिता चंदबरदाई हिंदी के प्रथम महाकवि हैं। पृथ्वीराज रासो ढाई हज़ार पृष्ठों का बहुत बड़ा ग्रंथ है जिसमें 96 अध्याय हैं। इसमें प्राचीन समय में प्रचलित प्रायः सभी छंदों का प्रयोग हुआ है। पृथ्वीराज रासो पूरा चंद का लिखा हुआ नहीं है। इसका उत्तरार्ध उनके पुत्रा जल्हण ने पूरा किया। इसका संकेत रासो में ही मिलता हैः

'पुस्तक जल्हण हाथ दै चलि गज्जन नृप काज।

अन्य रचनाएँ: अब तक हम हिंदी-साहित्य के आदि काव्य पर बहुत बातें कर चुके हैं। हमने शुरू में ही कहा था कि असल में रासो गं्रथों, नाथों और जैनियों की रचनाओं में बहुत कुछ प्राकृत का अंश बच रहा था। वे शुद्ध हिंदी की कोटि मंे नहीं आतीं। शुद्ध हिंदी में रचनाएँ परवर्ती काल में ही हो पाईं। और उस समय इसके दो प्रतिनिधि कवि थे-

पश्चिम में अमीर-खुसरो और सुदूर पूरब में विद्यापति।

खुसरो: खुसरो ने अपनी रचना सं. 1340 के आसपास आरंभ की। इन्होंने बलबन से लेकर अलाउद्दीन, कुतुबुद्दीन, मुबारक शाह आदि कई शासकों का जमाना देखा था। इनकी मृत्यु सं. 1381 में हुई। ये फ़ारसी के बहुत अच्छे कवि थे। सरल भाषा में इनकी मुकरियाँ और पहेलियाँ बहुत प्रसिद्ध हैं।

इनकी बोली पर दिल्ली तथा मेरठ की तत्कालीन भाषा का प्रभाव था। खड़ीबोली के पुराने रूप के दर्शन अमीर खुसरो की पहेलियों तथा मुकरियों में किए जा सकते हैं। इस भाषा में अरबी तथा फ़ारसी शब्दों का प्रयोग हिंदी क्रियाओं के साथ किया गया है। ख़ुसरो की निम्नलिखित पहेली तो आज भी लोगों की जिह्वा पर है-

एक थाल मोती भरा, सबके सिर पर औंधा धरा।

चारों ओर वह थाली फिरे, मोती उससे एक न गिरे।। (आकाश)

उनकी भाषा का एक और नमूना देखें -

'बाला था जब सबको भाया, बढ़ा हुआ कुछ काम न आया।

ख़ुसरो कह दिया उसका नाँव, अर्थ करो नहीं छोड़ो गाँव।।' (दिया, दीपक)

विद्यापति: विद्यापति अपभ्रंश के भी कवि हैं। लेकिन जिसके कारण ये कोकिल मैथिल कहलाए वह इनकी 'पदावली' है जो उस क्षेत्रा में प्रचलित 'मैथिली' में है। विद्यापति के पद प्रायः शृंगार के ही हैं जिसमें नायक और नायिका कृष्ण और राधा हैं। विद्यापति सं1460 में तिरहर के राजा शिवसिंह के यहाँ वर्तमान थे। उनके काव्य में वैष्णव धर्म की मर्यादा और शैव मत का तादात्म्य.भाव दोनों एक साथ मिलते हैं। काम.भाव और शरीर के सौंदर्य के अनेक चित्रा उनके काव्य में मिलते हैं। हालाँकि अपने समय की परंपरा के अनुसार विद्यापति ने अपने आश्रयदाता राजाओं को केंद्र में रखकर 'कीर्तिलता' और कीर्तिपताका' ग्रंथों की भी रचना की। 'कीर्तिलता' अवहट्ठ भाषा रूप में उपलब्ध है।

मोटे हिसाब से वीरगाथा काल महाराज हम्मीर के काल तक ही समझना चाहिए। वीर गाथाएँ इसके बाद भी लिखी जाती रही होंगी। लेकिन इसके बाद हिंदी साहित्य की मुख्यधारा भक्तिकाल में प्रवेश कर जाती है।

आदिकालीन काव्य की विशेष बातें

- आदिकालीन साहित्य में विषयों, काव्य.रूपों तथा काव्य.भाषा की भरपूर विविधता है।
- सिद्ध कवि सरहपा (पं. राहुल सांकृत्यायन के अनुसार) हिंदी परंपरा के पहले कवि हैं।
- नाथपंथियों ने योगी को सबसे ऊँचा बताया और जैन कवियों ने अपनी धर्मसाधना को सीधे.सीधे अभिव्यक्त किया।
- चंदबरदाई कृत 'पृथ्वीराज रासो' इस काल का प्रसिद्ध वीर.काव्य है। यों, कुछ लोग नरपति नाल्ह रचित 'बीसलदेव रासो' (गीतात्मक ग्रंथ) को पहला वीर.काव्य मानते हैं।
- जगनिक ने प्रसिद्ध राजा परमाल के वीर सेनापतियों आल्हा और ऊदल के संबंध में 'परमाल रासो' नामक ग्रंथ रचा। यह ग्रंथ

International Journal for Innovative Engineering and Management Research
PEER REVIEWED OPEN ACCESS INTERNATIONAL JOURNAL
www.ijiemr.org

उपलब्ध नहीं है। बुंदेलखंड में लोकप्रिय आल्हा इसी काव्यग्रंथ का अंश है।

- वीरता पूर्ण रचनाओं द्वारा वीरों को प्रेरित करने का कार्य कवियों ने किया। इस काल का वीरगाथात्मक साहित्य युद्ध की गूँजों से भरा है।
- अमीर खुसरो ने दिल्ली.मेरठ की चलती खड़ी बोली में मुकरियाँ, पहेलियाँ तथा दोहे रचे।
- विद्यापति ने अपने कृष्णभक्ति के पदों में शृंगार का सुंदर चित्राण किया और 'कीर्तिलता' अवहट्ठ में लिखी।

भक्तिकाल

भक्तिकाल से अभिप्राय

भक्तिकाल के कवियों की रचनाएँ आप रैदास, तुलसी, मीराँबाई आदि के पाठों में पढ़ चुके हैं। आप जानते हैं भक्ति का अर्थ है भजना। पूजा आदि में अनुराग तथा कथा आदि में अनुरक्ति को भक्ति कहते हैं। इसीलिए हिंदी साहित्य का वह समय जिसमें ईश्वर की आराधना, भजन आदि से संबंधित काव्य रचा गया, ईश्वर के अवतारों की कथा गाई गई, 'भक्तिकाल' कहलाता है।

हिंदी साहित्य के इतिहास में लगभग 1350 ई0 से 1650 ई0 तक का समय (लगभग तीन सौ वर्ष) भक्तिकाल कहलाता है। इन वर्षों में कवियों ने ईश्वर की आराधना में अपनी सारी रचना.शक्ति लगा दी। अलग.अलग कवियों ने ईश्वर के निराकार (जिसका कोई आकार या रूप नहीं) और साकार (जिनका आकार और रूप है) रूप का वर्णन किया और आपसी भेद.भाव भुला कर प्रेम से रहने का उपदेश दिया। धर्म के बाहरी आडंबरों, दिखावों आदि की आलोचना की और इनकी बुराइयों पर प्रहार किया। ऐसे ही काव्य को भक्ति.काव्य कहा गया। उस काल के प्रमुख कवि कबीर, रैदास, नानक, दादूदयाल, सुंदरदास, मलूकदास, कुतबन, मंझन, जायसी, उसमान, नूरमुहम्मद, सूरदास, परमानंददास, कंुभनदास, नंददास, हितहरिवंश, हरिदास, रसखान, ध्रुवदास, मीराँबाई, तुलसीदास, अग्रदास, नाभादास आदि हैं।

भक्ति-काव्य की विभिन्न शाखाएँ

आप पहले पढ़ चुके हैं प्रमुखतः भक्ति दो प्रकार की होती है, निर्गुण भक्ति और सगुण भक्ति। इसी आधार पर भक्ति.काव्य की दो प्रमुख धाराएँ हुईं - निर्गुण काव्यधारा और सगुण काव्य धारा। निर्गुण काव्य.धारा दो रूपों में विकसित हुई-ज्ञानमार्गी तथा प्रेममार्गी। सगुण भक्ति में विष्णु के अवतारों में सर्वाधिक लोकप्रिय राम और कृष्ण को केंद्र में रख कर काव्यरचना की गई, जिसे राम भक्ति काव्य और कृष्ण भक्ति काव्य के नाम से जाना जाता है। निम्नलिखित वृक्ष आरेख से यह बात और स्पष्ट हो जाएगी-

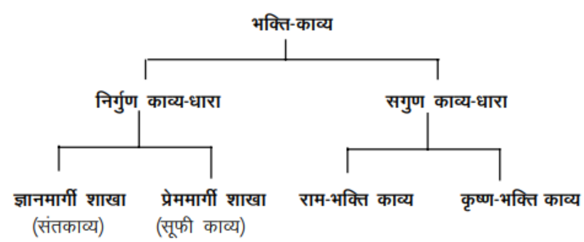

आइए, इन पर अलग.अलग चर्चा करें और इनके प्रमुख कवियों तथा रचनाओं का परिचय प्राप्त करें।

निर्गुण काव्य-धारा

इस काव्य-धारा के कवियों ने ईश्वर को रूप, आकार आदि से रहित (निःगुण;गुणत्ररूप) माना है। ईश्वर के अवतार में ये विश्वास नहीं करते। वे तर्क (ज्ञान) के आधार पर अवतारवाद का खंडन करते हैं तथा ईश्वर को आंतरिक अनुभूति का विषय मानते हैं। कुछ निर्गुण उपासक कवियों ने प्रेमकथाओं के माध्यम से ईश्वर के निराकार रूप को समझाने का प्रयास किया। इस तरह निर्गुण काव्य-धारा की दो उप.धाराएँ हो गईं। पहली ज्ञानमार्गी धारा, दूसरी प्रेममार्गी धारा। ज्ञानमार्गी धारा को मुख्यतः संतों ने पुष्ट किया इसलिए इसे संत.काव्य या संत.साहित्य भी कहते हैं। प्रेममार्गी धारा के कवि सूफी मत (इस्लाम और भारतीय वेदांत दर्शन का मिला-जुला रूप) को मानते थे। इसीलिए प्रेममार्गी धारा के काव्य.साहित्य को सूफी काव्य या प्रेमाख्यानक (प्रेमआख्यान; आख्यान अर्थात कथा) काव्य भी कहते हैं। निर्गुण संत.काव्य के प्रवर्तक कबीरदास (1399-1518 ई.) माने जाते हैं। कबीर के संबंध में अनेक परस्पर विरोधी धारणाएँ प्रचलित हैं। इतना निश्चित है कि उन्होंने औपचारिक शिक्षा नहीं प्राप्त की थी। वे रामानंद के शिष्य थे। उन्होंने हिंदू और मुसलमान दोनों में व्याप्त पाखंड की कड़े शब्दों में निंदा की। अन्य धार्मिक तथा सामाजिक संस्कारों की तरह अभिव्यक्ति की भाषा और शैली भी उन्होंने अपने पूर्ववर्ती सिद्धों और नाथपंथी जोगियों से प्राप्त की तथा उसे अपने समय और समाज के अनुकूल निखारा। उनकी गणना हिंदी के शीर्ष कवियों में की जाती है। अनेक भाषाओं के मिले-जुले रूप के कारण उनकी भाषा नितांत भिन्न प्रकार की है और संभवतः इसी कारण 'सधुक्कड़ी' है।

कबीर के अतिरिक्त निर्गुण संतों की परंपरा में रैदास, कमाल, नानक, दादू, मलूकदास, सहजोबाई, दयाबाई, सं◌ुदरदास आदि अनेक भक्त हुए हैं। इनमें से अधिकांश तत्कालीन समाज में निम्न समझी जाने वाली जातियों के थे। इन्होंने जनसामान्य की भाषा में भक्ति का संदेश लोगों तक पहुँचाया।

संत-काव्य

संत.काव्य में शब्द और शैली के चमत्कार की जगह भाव.सौंदर्य पर ध्यान दिया गया है। संत कवियों ने किसी एक धर्म को अपना आदर्श न मानकर एक व्यापक जीवनदर्शन की ओर संकेत किया है, जिसमें सारे विश्व का कल्याण समाहित हो। संत कवियों ने अपनी काव्य रचना प्रायः 'साखी' तथा 'सबद' में की है, जो अधिकतर गेय हुआ करती हैं। इनमें कवियों ने आत्म.निवेदन जैसे व्यक्तिगत उद्गारों को ही प्रधानता दी। संतों ने कविता लिखने के उद्देश्य से अपनी रचनाओं का संकलन नहीं किया। वे तो अपने उद्गार व्यक्त कर रहे थे, इनके शिष्यों ने इनकी वाणियों ('संतों की बानी') का संकलन किया। इन संत कवियों की संकलित बानी के आधार पर संत काव्य की प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार हैं:

संत काव्य की विशेषताएँ

संतों ने ईश्वर को रूप.गुण से रहित मानकर उसके नाम की उपासना पर बल दिया। अवतारवाद को इन्होंने स्वीकार नहीं किया।

ईश्वर प्राप्ति में माया को बाधक कहकर उसका तिरस्कार किया।

गृहस्थ.जीवन में रहते हुए ईश्वर.भजन का उपदेश दिया।

माला फेरने, मूर्ति.पूजा करने, तीर्थ आदि में जाने को धार्मिक आडंबर कहकर उनका खंडन किया। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र वर्णों के आधार पर लोगों को ऊँचा या नीचा, श्रेष्ठ तथा हीन समझने वाली वर्ण-व्यवस्था की इन्होंने विशेष रूप से निंदा की और हँसी उड़ाई।

संतों ने मुख्यतः गेय मुक्तकों की रचना की।

संत.साहित्य में सूक्तियों का प्राचुर्य है।

संतों की भाषा सरल है। इसमें अनेक भारतीय भाषाओं के शब्द घुले-मिले हैं, इसलिए इसे सधुक्कड़ी अथवा खिचड़ी भाषा के नाम से भी जाना जाता है।

सूफ़ी काव्य

सूफी साधक प्रेम के द्वारा परमात्मा को पाने की बात करते हैं। परमात्मा उनके लिए परम प्रिय है और आत्मा उस प्रियतम को पाने के लिए व्याकुल रहती है। आत्मा और परमात्मा के बीच के इस प्रेम को व्यक्त करने के लिए सूफी कवि प्रेम की विभिन्न मनोदशाओं का वर्णन करते हैं। साकी, शराब, माशूक, जुल्फ आदि का प्रयोग इन कवियों ने सांकेतिक अर्थ में किया। अधिकांश सूफी कवि मुस्लिम धर्म के मानने वाले हैं। इसके साथ.साथ वे लोक जीवन में गहरी पैठ रखते हैं तथा मनुष्यों के परस्पर संबंध और मनुष्य तथा प्रकृति के संबंध को प्रेममय देखना चाहते हैं। इस्लाम तथा भारतीय लोक संस्कृति का अद्‌भुत समन्वय इनके काव्य का विलक्षण गुण है। प्रसिद्ध लौकिक प्रेमकथाओं के द्वारा इन्होंने अलौकिक ईश्वर-प्रेम का वर्णन किया है। प्रेमकथाओं पर आधारित होने के कारण सूफी काव्य को प्रेमाख्यानक (प्रेमआख्यानक) काव्य कहा जाता है। इन काव्य कथाओं की भाषा अवधी है। इस्लाम के एकेश्वरवाद और भारतीय वेदांत को मिलाकर इन्होंने अपना चिंतन विकसित किया। काव्यकला की दृष्टि से सूफी काव्य अत्यंत श्रेष्ठ है। सौंदर्य चित्राण और प्रकृति चित्राण के लिए विभिन्न अलंकारों तथा अभिव्यक्तियों का अनूठा और सहज प्रयोग इनके काव्य की प्रमुख विशेषता है।

मुल्ला दाऊद सूफी साहित्य के पहले कवि हैं। इनकी प्रसिद्ध रचना है-चंदायन। अन्य प्रसिद्ध सूफी कवि और उनके काव्य हैं-कुतुबन (मृगावती), मंझन (मधुमालती), उसमान (चित्रावली), जायसी (पद्मावत) तथा नूर मुहम्मद (अनुराग बाँसुरी)। इन कवियों में सबसे अधिक प्रसिद्ध जायसी हैं और उनका 'पद्मावत' अत्यंत प्रसिद्ध ग्रंथ है।

सूफी काव्य की विशेषताएँ

सूफियों ने प्रायः कथा.काव्य (प्रबंध काव्य) लिखे हैं।

इन्होंने इस्लाम, वेदांत और भारतीय लोक.संस्कृति का सुंदर समन्वय किया है।

आत्मा.परमात्मा के बीच इन्होंने आत्मा को प्रेमी और परमात्मा को प्रेमिका माना है।

लौकिक प्रेम.कथाओं के माध्यम से इन्होंने अलौकिक ईश्वर.प्रेम का वर्णन किया है इसी कारण इनके काव्य प्रतीकात्मक हैं।

इन काव्यों में प्रेम और विशेषतः विरह की प्रधानता है। विरह.वर्णन के लिए इन्होंने प्रायः

International Journal for Innovative Engineering and Management Research
PEER REVIEWED OPEN ACCESS INTERNATIONAL JOURNAL
www.ijiemr.org

बारहमासा शैली (बारह महीनों में प्रेमिका या प्रेमी की मनोदशा तथा तड़प का वर्णन) का प्रयोग किया है।

इनकी भाषा अवधी है।

इनकी शैली मसनवी है। मसनवी ऐसे कथाकाव्य का प्रतिरूप है, जो महाकाव्य के निकट पहुँचता है।

निष्कर्ष

भक्ति का आरंभ दक्षिण के आलवार संतों द्वारा दसवीं सदी के लगभग हुआ। वहाँ शंकराचार्य के अद्वैतमत और मायावाद के विरोध में चार वैष्णव संप्रदाय खड़े हुए। इन चारों संप्रदायों ने उत्तर भारत में विष्णु के अवतारों का प्रचारप्रसार किया। इनमें से एक के प्रवर्तक रामानुजाचार्य थे, जिनकी शिष्यपरंपरा में आनेवाले रामानंद ने (पंद्रहवीं सदी) उत्तर भारत में रामभक्ति का प्रचार किया। रामानंद के राम ब्रह्म के स्थानापन्न थे जो राक्षसों का विनाश और अपनी लीला का विस्तार करने के लिए संसार में अवतीर्ण होते हैं। भक्ति के क्षेत्र में रामानंद ने ऊँचनीच का भेदभाव मिटाने पर विशेष बल दिया। राम के सगुण और निर्गुण दो रूपों को माननेवाले दो भक्तों - कबीर और तुलसी को इन्होंने प्रभावित किया। विष्णुस्वामी के शुद्धाद्वैत मत का आधार लेकर इसी समय बल्लभाचार्य ने अपना पुष्टिमार्ग चलाया। बारहवीं से सोलहवीं सदी तक पूरे देश में पुराणसम्मत कृष्णचरित् के आधार पर कई संप्रदाय प्रतिष्ठित हुए, जिनमें सबसे ज्यादा प्रभावशाली वल्लभ का पुष्टिमार्ग था। उन्होंने शांकर मत के विरुद्ध ब्रह्म के सगुण रूप को ही वास्तविक कहा। उनके मत से यह संसार मिथ्या या माया का प्रसार नहीं है बल्कि ब्रह्म का ही प्रसार है, अत: सत्य है। उन्होंने कृष्ण को ब्रह्म का अवतार माना और उसकी प्राप्ति के लिए भक्त का पूर्ण आत्मसमर्पण आवश्यक बतलाया। भगवान् के अनुग्रह या पुष्टि के द्वारा ही भक्ति सुलभ हो सकती है। इस संप्रदाय में उपासना के लिए गोपीजनवल्लभ, लीलापुरुषोत्तम कृष्ण का मधुर रूप स्वीकृत हुआ। इस प्रकार उत्तर भारत में विष्णु के राम और कृष्ण अवतारों प्रतिष्ठा हुई।

इस प्रकार इन विभिन्न मतों का आधार लेकर हिंदी में निर्गुण और सगुण के नाम से भक्तिकाव्य की दो शाखाएँ साथ साथ चलीं। निर्गुणमत के दो उपविभाग हुए - ज्ञानाश्रयी और प्रेमाश्रयी। पहले के प्रतिनिधि कबीर और दूसरे के जायसी हैं। सगुणमत भी दो उपधाराओं में प्रवाहित हुआ - रामभक्ति और कृष्णभक्ति। पहले के प्रतिनिधि तुलसी हैं और दूसरे के सूरदास।

ज्ञानश्रयी शाखा के प्रमुख कवि कबीर पर तात्कालिक विभिन्न धार्मिक प्रवृत्तियों और दार्शनिक मतों का सम्मिलित प्रभाव है। उनकी रचनाओं में धर्मसुधारक और समाजसुधारक का रूप विशेष प्रखर है। उन्होंने आचरण की शुद्धता पर बल दिया। बाह्याडंबर, रूढ़ियों और अंधविश्वासों पर उन्होंने तीव्र कशाघात किया। मनुष्य की क्षमता का उद्‌घोष कर उन्होंने निम्नश्रेणी की जनता में आत्मगौरव का भाव जगाया। इस शाखा के अन्य कवि रैदास, दादू हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

- करेन । भक्ति का अवतार।(1999) ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस :अमेरिका

International Journal for Innovative Engineering and Management Research
PEER REVIEWED OPEN ACCESS INTERNATIONAL JOURNAL
www.ijiemr.org

.24 पी।आईएसबीएन -19-0-978 0I-512813

- वर्नर ., कारेल :। लव डिवाइन(1993) भक्ति और भक्ति रहस्यवाद में अध्ययन। रूटलेज। प ी। .168आईएसबीएन 0I-0235-7007-0-978
- भक्ति संस्कृत अंग्रेजी शब्दकोश ., कोलेन विश्वविद्यालय, जर्मनी
- करेन पेकेलिस (2014), द अवतार, भक्ति, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, आईएसबीएन 0195351903-978, पृष्ठ 21-19
- मैक्स मुलर ., श्वेताश्वतर उपनिषद, द उपनिषद, भाग II, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, पृष्ठ 267
- मैक्स मुलर ., द श्वेताश्वतर उपनिषद, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, पेज xxxii – xlii
- मैक्स मुलर ., द श्वेताश्वतर उपनिषद, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, पेज xxxiv और xxxvii
- ए बी डी :जंप अप टू बी . श्रीनिवासन (1997), कई हेड्स, आर्म्स एंड आईज, ब्रिल, आईएसबीएन 9004107588-978, पेज 9 और चैप्टर 97-96
- ली सिएगेल ., कमेंट्री थिज्म इन इंडियन : थॉट्स, फिलॉसफी ईस्ट एंड वेस्ट, वॉल्यूम। 28, नंबर) 4अक्टूबर, (1978, पृष्ठ 423-419
- (1985) आर त्सुचिदा ., श्वेताश्वतर-उपनिषद के पाठ पर कुछ टिप्पणी, भारतीय और बौद्ध अध्ययन जर्नल, वॉल्यूम। 34, नंबर 1, पृष्ठ 468-460, उद्धरण उपनिषद वैदिक-श्वेताश्वतर" : योग सिद्धांतों-उपनिषदों के बीच समाख्य पंथ-के साथ संयुक्त ध्यान और अद्वैत रुद्र की गवाही के रूप में अद्वितीय स्थ ान रखता है।"
- (2000) एम। हिरियाना ., द एसेंशियल ऑफ इंडियन फिलॉसफी, मोतीलाल बनारसीदास, आईएसबीएन -978 8120813304, पृष्ठ 36-32
- (2012) जेडी फाउलर ., द भगवद गीता : ए टेक्स्ट एंड कमेंट्री फॉर स्टूडेंट्स, ससेक्स एकेडमी प्रेस, आईएसबीएन 5-520-84519-1-978, फॉरवर्ड देखें
- माइनर ., रॉबर्ट नील । भगवद्गीता(1986) के आधुनिक भारतीय व्याख्याकार। सनी .3 प्रेस। पी।आईएसबीएन -0-978 1I-297-88706